25 प्रबन्धन
(Management)

साधारण शब्दों में प्रबन्धन का अभिप्राय विचारपूर्वक की गई व्यवस्था से है अर्थात् प्रबन्धन का अर्थ कार्य करने की उन विधियों से है जिनके द्वारा हम किसी भी परिस्थिति में समस्त उपलब्ध साधनों का सर्वोत्तम ढंग से उपयोग करते हैं तथा अपनी अधिकतम इच्छाओं की पूर्ति करने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार कम से कम साधनों का उपयोग करते हुए अधिकतम लक्ष्यों को प्राप्त करने की विधियाँ ही प्रबन्ध कहलाती हैं।

गृह प्रबन्ध की परिभाषा (Definition of Home Management) :

गृह प्रबन्ध पारिवारिक जीवन का प्रशासनात्मक (Administrative) पक्ष है। विद्वानों ने इसे विभिन्न तरीकों से परिभाषित किया है।

ग्रॉस एवं क्रेन्डल (Gross & Crandall) के अनुसार :

"गृह व्यवस्था निर्णयों की वह श्रृंखला है, जिसमें पारिवारिक साधनों का उपयोग कर, पारिवारिक लक्ष्यों को प्राप्त करने की प्रक्रिया सम्मिलित है। इस प्रक्रिया में तीन चरण होते हैं जो एक दूसरे पर निर्भर करते हैं – आयोजन, नियंत्रण एवं परिणामों का मूल्यांकन, जो आगामी आयोजन के लिये मार्गदर्शक होता है।"

निकिल एवं डॉर्सी (Nickell & Dorsey) के अनुसार :

"गृह व्यवस्था परिवार के लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से परिवार के स्त्रोतों या साधनों के प्रयोग हेतु किया गया आयोजन, संगठन, नियंत्रण एवं मूल्यांकन है।"

प्रबन्ध की आवश्यकता (Need for management) :

मनुष्य अपने जीवन काल में अनेक इच्छाओं की पूर्ति करना चाहता है। इन इच्छाओं की पूर्ति हेतु वह उपलब्ध मानवीय तथा अमानवीय साधनों का उपयोग करता है। साधन सीमित हैं तथा इच्छाएँ असीमित अतः इनके बीच समायोजन करने हेतु प्रबन्ध की आवश्यकता महसूस होती है। आज के इस युग में प्रबन्ध मानव जीवन का एक अभिन्न अंग है। प्रबन्ध की अनुपस्थिति में लक्ष्यों की पूर्ति हेतु साधनों का अधिकतम उपयोग कर पाना मुश्किल है। साधनों में दिन प्रतिदिन कमी होती जा रही है फलस्वरूप प्रबन्ध का महत्त्व भी बढ़ता जा रहा है। उदाहरण के लिये पैट्रोल का भण्डार दिन प्रतिदिन घटता जा रहा है जबकि इसकी आवश्यकता निरन्तर बढ़ती जा रही है। अतः हम सभी को इसका उपयोग व्यवस्थित ढंग से करना चाहिये ताकि कम पैट्रोल द्वारा अधिक दूरी तय की जा सके, कार्यों की योजना बनाकर उन्हें एक ही चक्कर में एक साथ निपटा लें इत्यादि।

आधुनिक पारिवारिक जीवन के परिवर्तन, घर की व्यवस्था को भी प्रभावित करते हैं। अधिकारों के प्रति और समाज में बच्चों व महिलाओं की स्थिति पर बदलती विचार धारा ने पारिवारिक सम्बन्धों और पारिवारिक साधनों के उपयोग के सम्बन्ध में कई नयी समस्याएँ उत्पन्न कर दी हैं। जैसे एकाकी परिवार

की महिला का काम काजी होना उसके बच्चों की देखभाल में कई समस्याएँ पैदा करता है। घरों के उत्पादन इकाई से उपभोग इकाई में परिवर्तन से न केवल मानवीय एवं भौतिक साधनों के उपयोग से सम्बन्धित व्यवस्थापन समस्याओं में वृद्धि हुई है वरन् इन समस्याओं को हल करने हेतु विभिन्न विधियों की आवश्यकता भी उत्पन्न हुई है। गृहिणी को यदि इन समस्याओं का संतोषप्रद तरीके से हल करना है तो उसे प्रबन्ध के विस्तृत ज्ञान की आवश्यकता होती है।

आधुनिक घरों के साधनों का बुद्धिमत्तापूर्वक उपयोग न केवल प्राप्त संतोष के आधार पर नापा जा सकता है वरन् पारिवारिक सदस्यों के विकास एवं उनके सामाजिक कल्याण पर भी उसका प्रभाव देखा जा सकता है। आधुनिक घरों की सफल व्यवस्था के लिये साधनों के सम्बन्ध में निर्णय लेने हेतु परिवार का सहयोग आवश्यक है। किसी भी कार्य की सफलता चाहे वह उच्चतम शिक्षा या फिर भवन निर्माण सम्बन्धी हो, अच्छे प्रबन्ध पर निर्भर करती है। एक उज्ज्वल भविष्य की आशा काफी कुछ अच्छे प्रबन्ध पर निर्भर करती है अतः जीवन में प्रत्येक लक्ष्य प्राप्ति में प्रबन्ध की महत्ता है।

x`g O;oLFkk ds rÙo (Concepts of management) :

1. गृह व्यवस्था के उत्प्रेरक (Motivating factors of management)

समस्याओं का निराकरण करने के लिए प्रत्येक परिवार निरन्तर व्यवस्था सम्बन्धी निर्णय लेता रहता है। यह निर्णय कुछ तत्त्वों द्वारा निर्देशित होते हैं, यद्यपि निर्णयकर्त्ता इन निर्देशित करने वाली शक्तियों से अनभिज्ञ रहता है। **इन्हीं शक्तियों को उत्प्रेरक कहते हैं।** गृह व्यवस्था के तीन उत्प्रेरक हैं– मूल्य (Values), लक्ष्य (Goals) एवं स्तर (Standards)। तीनों का आपस में अटूट सम्बन्ध होता है। मूल्य इस त्रिकोण का केन्द्र बिन्दु है। मूल्यों से ही अन्य दोनों उत्प्रेरकों की उत्पत्ति होती है। लक्ष्य एवं स्तर, मूल्यों पर तथा स्वयं एक दूसरे पर अपना प्रभाव डालते हैं। यह अन्तर्सम्बन्ध निम्न त्रिकोण द्वारा आसानी से समझा जा सकता है।

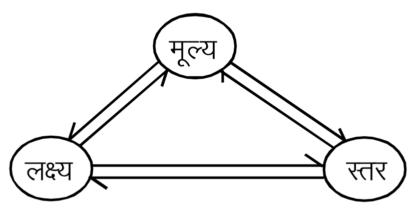

(अ) **मूल्य** : ये वे प्रेरणात्मक तत्त्व हैं जो मनुष्य की भावनाओं को विशेष दिशा देते हैं। निकल एवं डॉर्सी के अनुसार – ''मूल्य मानवीय व्यवहार को प्रेरणा प्रदान करने वाले तत्त्व हैं। यह न्याय करने, व्याख्या करने और विश्लेषण करने हेतु आधार प्रदान करते हैं और इनमें यह गुण होता है कि विभिन्न विकल्पों के मध्य बुद्धिमत्तापूर्वक चयन को सम्भव बनाते हैं।'' जैसे प्रसन्नता, स्वास्थ्य, शिक्षा, कला, सुरक्षा, संस्कृति आदि सभी हमारे मूल्य हैं। इन सभी को ध्यान में रख कर हम अपने जीवन को नियंत्रित करते हैं ताकि हमें अपने जीवन में अत्यधिक सुख की अनुभूति हो। मूल्य मानवीय रुचि और इच्छाओं को उत्पन्न करते हैं। इन्हें हम अपने व्यवहार द्वारा अभिव्यक्त करते हैं। जैसे किसी व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने से खुशी मिलती है और उसकी अभिव्यक्ति आनन्द प्रदान करने वाली होती है अर्थात् उसका मूल्य आनन्द (Happiness) या संतोष (Satisfaction) है। पार्कर (Parker) के अनुसार ''मानव आचरण को नियंत्रित करने वाले मूल्य मुख्य रुप से प्रेम, ज्ञान, आचरण, विवेक, स्वास्थ्य, महत्त्वाकांक्षा, सुख, कार्य, कुशलता आदि हैं।

विशेषताएँ :

1. मूल्य ग्रहण करने वाले व्यक्ति के लिए महत्त्वपूर्ण होते हैं अर्थात वे व्यक्तिगत होते हैं।
2. ये वांछनीय एवं सन्तुष्टि प्रदान कराने वाले होते हैं।
3. मूल्य किसी वस्तु, विचार और सोच प्रक्रिया का वह गुण है जो लक्ष्य के निर्धारण में सहायक होता है एवं विभिन्न विकल्पों का चुनाव करने में दिशा निर्देशक का कार्य करता है।
4. मूल्य संस्कृति के परिचायक होते हैं। वे हमारी संस्कृति को प्रदर्शित करते हैं।

प्रकार : पार्कर के अनुसार मूल्य दो प्रकार के होते हैं :

1. आन्तरिक मूल्य (Internal values)
2. बाह्य मूल्य (External values)

i. आन्तरिक मूल्य : आन्तरिक मूल्य वह होते है जो किसी व्यक्ति के लिए महत्त्वपूर्ण होते है तथा ये व्यक्ति में पाये जाने वाले प्राकृतिक गुण है जिन पर किसी भी प्रकार का बाह्य दबाव नहीं होता, जैसेः कला (Art), सौन्दर्य (Beauty), रुचि (Interest) आदि।

ii. बाह्य मूल्य : ये मूल्य व्यक्ति के स्वयं के प्रयासों का फल है, जो मनुष्य अपने जीवन काल में सीखता है। ये बाह्य दबावों का प्रतिफल है। जैसे सुरक्षा (Security), प्रतिष्ठा (Prestige), आर्थिक लाभ (Economic returns) आदि।

प्रत्येक परिवार ऐसे मूल्यों को स्थापित करते हैं जो इसके प्रत्येक सदस्य के लिये उपयुक्त हैं और जिस पर प्रत्येक सदस्य विश्वास करता है अन्यथा मूल्य परिवार को या उसके सदस्यों को विकल्प चुनने में सहायता नहीं कर पायेगा। पहले व्यक्ति स्वयं के रुप में मूल्यों का मूल्यांकन करता है, फिर समुदाय के सदस्य के रुप में और अन्त में सम्पूर्ण जाति के सदस्य के रुप में मूल्यांकन करता है।

(ब) **लक्ष्य** : लक्ष्य जीवन के उन साध्यों में से एक है जिन्हें प्राप्त करने हेतु प्रत्येक व्यक्ति या परिवार प्रयत्नशील रहता है। मूल्य, लक्ष्यों के आधार के रुप में कार्य करते हैं, चूंकि इन्हें प्राप्त किया जा सकता है अतः ये मूल्यों की तुलना में अधिक निश्चित होते हैं।

निकल एवं डॉर्सी के अनुसार सामान्य अर्थो में, ''लक्ष्य वह अन्तिम बिन्दु होता है जहाँ तक व्यक्ति या परिवारों द्वारा कार्य करने की इच्छा रखी जाती है।''

लक्ष्य स्पष्ट और परिवर्तनशील होते हैं। लक्ष्य एक उद्देश्य है। हम अपने जीवन को सफल बनाने और अपने व्यक्तित्व का विकास करने हेतु लक्ष्य का निर्माण करते हैं। लक्ष्य का निर्माण एक सतत् प्रक्रिया है। कुछ लक्ष्य प्रत्यक्ष एवं निश्चित होते है। कुछ लक्ष्य कम समय में पूरे किये जा सकते हैं तो कुछ लक्ष्यों की पूर्ति देर से होती है। एक लक्ष्य की समाप्ति पर दूसरा लक्ष्य सामने आ जाता है। मूल्यों एवं उपलब्धियों के आधार पर लक्ष्य परिवर्तित होते रहते हैं। ये ग्रहण करने योग्य वस्तु, अन्त या उद्देश्य हैं। लक्ष्यों से हमें सामान्य रुप से प्रसन्नता की अनुभूति होती है और ये व्यक्तिगत जीवन में सन्तोषप्रद जीवन का निर्माण करते है। लक्ष्य व्यावहारिक (Practical) एवं यथार्थवादी (Factual) होने चाहिये, जिन्हें पूरा करना सम्भव हो। लक्ष्यों का निर्माण साधनों की उपलब्धता को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिये अन्यथा अनुपयुक्त कहलायेंगे। समाज में प्रचलित रीति–रिवाज और परम्परा लक्ष्यों को प्रमाणित करते हैं।

प्रकार :

लक्ष्य साधारणतः तीन प्रकार के होते हैं :

1. अल्पकालीन लक्ष्य (Short term goal)
2. मध्य अन्त लक्ष्य (Means end goals)
3. दीर्घकालीन लक्ष्य (Long term goals)

i. **अल्पकालीन लक्ष्य :** ये वे लक्ष्य होते हैं जिन्हें व्यक्ति प्रतिदिन खोजता रहता है अर्थात् ये हमारी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इनकी संख्या बहुत अधिक होती है। इनमें से सभी लक्ष्य महत्त्वपूर्ण नहीं होते हैं वरन् कुछ लक्ष्य ऐसे होते हैं जिन्हें हम दीर्घकालीन लक्ष्य को पूरा करने के लिए प्राप्त करते हैं। जैसे उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु पहले प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करना जरूरी है। अच्छे स्वास्थ्य हेतु हमें प्रतिदिन पौष्टिक भोजन एवं नियमित व्यायाम करना आवश्यक है। अतः प्रारम्भिक शिक्षा तथा पौष्टिक खाना एवं व्यायाम करना अल्पकालीन लक्ष्य है। जिसके द्वारा हम दीर्घकालीन लक्ष्य जैसे उच्च शिक्षा एवं अच्छा स्वास्थ्य प्राप्त करते हैं।

ii. **मध्य अन्त लक्ष्य :** ये निर्णय लेने वाले या मध्यवर्ती लक्ष्य की प्राप्ति हेतु एक चरण के रूप में रहते हैं। ये लक्ष्य केवल साधन मात्र होते हैं। कई मध्य अन्त लक्ष्य स्वयं अपने आप में पूर्ण होते हैं जिन्हें कुछ क्रियाओं द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। जैसे वस्तु खरीदने हेतु चैक लिखना, बाजार जाने हेतु रिक्शा करना, कहानी लिखने हेतु पैन व कागज लाना इत्यादि।

iii. **दीर्घकालीन लक्ष्य :** ये वे लक्ष्य होते हैं जिन्हें प्राप्त करने में लम्बा समय लग जाता है। ये लक्ष्य जटिल होते हैं। इनकी पूर्ति धीरे–धीरे होती है तथा इनको प्राप्त करने की विधियाँ भिन्न होती हैं। चूंकि यह कई मध्यवर्ती लक्ष्यों को आरम्भ करते हैं और प्रभावित करते हैं अतः ये बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं। जैसे उच्च शिक्षा, भवन निर्माण, बच्चों की शादी, अच्छा स्वास्थ्य आदि दीर्घकालीन लक्ष्य हैं।

लक्ष्य सामान्यत : अन्तर्सम्बन्धित और अन्तर्निर्भर होते हैं, एवं प्रत्येक व्यक्ति की दिनचर्या का भाग होते हैं और प्रत्येक व्यक्ति के लिये महत्त्वपूर्ण होते हैं।

(स) स्तर :

निकिल एवं डॉर्सी के अनुसार ''स्तर मूल्य के मापक होते हैं जिनकी उत्पत्ति हमारे मूल्यों से होती है और ये हमारी किसी वस्तु में रुचियों की मात्रा और प्रकार निर्धारित करते हैं और यह भी निर्धारित करते हैं कि हमें कितना संतोष प्राप्त हुआ।''

ग्रॉस एवं क्रेन्डल के अनुसार ''स्तर उस सीमा को निर्धारित करते हैं जहाँ तक कोई व्यक्ति या परिवार लक्ष्य प्राप्त करने हेतु कार्य करने को तैयार है।''

स्तर का निर्धारण साधन, मूल्य और लक्ष्यों के आधार पर होता है। स्तर मनुष्य के रहन–सहन के तरीके, व्यवहार कुशलता, सोचना, विचारना तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया से प्रभावित होते हैं।

बहुत से स्तर ऐसे होते हैं जो एक क्षेत्र या स्थिति में प्रयुक्त होते हैं जैसे वस्त्र, भोजन, शिक्षा एवं आचरण का स्तर। कई विशिष्ट स्तरों के संयोग से प्राप्त स्तर को रहन–सहन का स्तर (Standard of living) कहते हैं। स्तर की प्राप्ति हो जाने पर व्यक्ति संतुष्ट हो जाता है और प्राप्त न किये जाने की स्थिति में असंतुष्टि का अनुभव करता है। स्तर प्राप्ति एक आन्तरिक मानक है जिसे हम पूरा करते हैं।

यह कोई बाहरी नियम नहीं है जो इसे प्राप्त करने पर दबाव डालता हो। स्तरों का नैतिक आधार होता है, जिसके आधार पर उन्हें उचित या अनुचित कहा जाता है।

वर्गीकरण :

वैसे तो प्रत्येक परिवार एवं व्यक्ति की दृष्टि से स्तर भिन्न होते हैं पर मूल्यों के आधार पर इन्हें दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. परम्परागत स्तर (Conventional or traditional standards)
2. लचीले या परिवर्तनशील स्तर (Flexible standards)

i. परम्परागत स्तर : ये वे स्तर हैं जिन्हें समाज द्वारा मान्यता प्राप्त है तथा रुढ़िगत होते हैं। इनमें बदलाव लाना मुश्किल है। इन स्तरों को प्राप्त करने में अधिक श्रम एवं समय की आवश्यकता होती है। इन स्तरों को बनाने हेतु व्यक्ति को स्वयं को बदलना पड़ता है क्योंकि ये स्तर एक ही समय और स्थान पर स्थिर रहते हैं। जैसे कई परिवारों में किसी खास मौके पर खाने का एक विशिष्ट एवं स्थिर स्तर होता है। साधन के अभाव में या उसके न चाहने पर भी उसे समाज में वह स्तर अपनाना पड़ता है। जैसे मृत्यु भोज, पर्दा प्रथा आदि।

ii. परिवर्तनशील स्तर : ये स्तर समय और स्थान विशेष के अनुसार परिवर्तित हो जाते हैं। समुदाय के अधिकांश व्यक्ति इन्हें स्वीकार नहीं करते। इन्हें जान बूझकर अपनाया जाता है। इन स्तरों का केन्द्र बिन्दु व्यक्ति होता है। मानवीय आवश्यकता एवं स्थिति के अनुकूल ये स्तर परिवर्तित होते रहते हैं। ये किसी समुदाय द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं होते हैं। इन्हें कम प्रयत्नों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। जैसे समय के साथ–साथ शादी के मौके पर, गृह निर्माण में, भोजन के स्तर में बदलाव आया है। यदि बदलाव अच्छे काम के लिये आया है तो ऐसे स्तरों को अपनाने में व्यक्ति को कोई परेशानी नहीं होगी।

मूल्य, लक्ष्य एवं स्तर आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं। मनुष्य सर्वप्रथम अपने मूल्यों का निर्धारण करता है तथा उनको पाने के लिये प्रयत्नशील रहता है। स्तर एक तुलनात्मक आधार प्रस्तुत करता है। यदि व्यक्ति शिक्षा को अपना मुख्य मूल्य समझता है तो उसे जीवन में शिक्षा प्राप्त करने के लिये कई प्रयत्न करने पड़ते हैं। साधनों का प्रयोग कर वह उस मूल्य के अनुरूप लक्ष्य निर्धारित कर उसे हासिल कर लेता है तथा एक स्तर को पाने के लिये प्रयास करता रहता है।

2. प्रबन्ध प्रक्रिया (Management process) :

प्रत्येक व्यक्ति जीवन में अपने लक्ष्यों तक पहुँचने के लिये अपने साधनों की व्यवस्था करता है, विभिन्न निर्णय लेता है तत्पश्चात इन निर्णयों को क्रिया में परिवर्तित करता है। गृह व्यवस्था एक परिवर्तनशील प्रक्रिया है तथा सुनियोजित एवं सजीव क्रिया है। अतः इसे एक मानसिक प्रक्रिया (Mental process) कहते हैं जो निरन्तर चलती रहती है। प्रक्रिया क्रियाओं की वह श्रृंखला है जो हमें उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अग्रसर करती है। व्यवस्था की प्रक्रिया वह तरीका है जिसमें निर्णयों को क्रिया में परिवर्तित किया जाता है। उदाहरण के लिये गृहिणी कपड़े धोने का निर्णय लेती है तो उसे विभिन्न क्रियाएँ जैसे सामान इकट्ठा करना, कपड़े भिगोना, रगड़ना, निचोड़ना आदि करने होंगे जिसके फलस्वरूप उसका लक्ष्य पूर्ण हो जायेगा। इस प्रबन्ध प्रक्रिया को रेखाचित्र 13.1 द्वारा आसानी

से समझा जा सकता है।

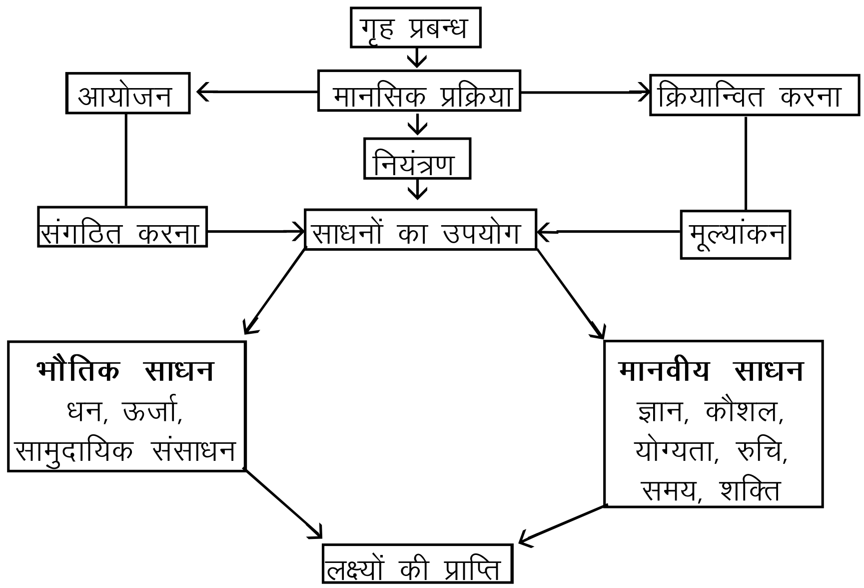

चित्र 13.1 : गृह प्रबन्ध प्रक्रिया

प्रबन्ध प्रक्रिया के निम्नलिखित चरण होते हैं :

1. आयोजन (Planning)
2. संगठित करना (Organizing)
3. क्रियान्वित करना (Implementing)
4. नियंत्रण करना (Controlling)
5. मूल्यांकन (Evaluating)

i. आयोजन (Planning):

आम तौर पर प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन कई चीजों का आयोजन करता है अर्थात् कार्य की योजना बनाता है। जैसे एक छात्र अपने स्कूल जाने की योजना बनाता है, व्यवसायी अपने माल को बेचने की योजना बनाता है तथा शिक्षक अपने छात्रों को कक्षा में पढ़ाने की योजना बनाता है। प्रबन्ध प्रक्रिया में योजना ही सफलता का आधार है। किसी भी कार्य को आरम्भ करने से पूर्व उसकी योजना तैयार कर ली जाती है। अच्छे आयोजन के परिणाम लाभप्रद एवं अच्छे होते हैं। योजना बनाने से पूर्व परिणामों का अनुमान लगा लिया जाता है। बिना सोचे समझे कार्य करने से समय और शक्ति का व्यय अधिक होता है। योजना करते समय हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि कम से कम साधनों का प्रयोग कर अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त कर सकें।

निकिल एवं डॉर्सी के अनुसार : ''एक वांछित लक्ष्य तक पहुँचने के विभिन्न सम्भावित मार्गों के सम्बन्ध में सोचना, कल्पना करना, प्रत्येक योजना की समाप्ति तक अनुगमन करना और व्यापक योजना का चुनाव करना ही आयोजना है।''

किसी भी सफल योजना को बनाते समय आपको कुछ मूलभूत प्रश्नों पर गौर करना आवश्यक है :

- किसी एक विशिष्ट क्रिया का करना क्यों आवश्यक है?
- क्या करना चाहिये? क्रिया की योजना के विभिन्न चरण कौन से हैं तथा इनका क्रम क्या होगा?
- यह क्रिया कहाँ होगी (स्थान) ?
- यह कब होगी (समय) ?
- क्रिया कौन करेगा (व्यक्ति) ?
- क्रिया कैसे होगी (तरीका/साधन) ?

उदाहरणार्थ यदि आपको स्कूल से पिकनिक पर जाना है तो आप इसके आयोजन हेतु विभिन्न बिन्दुओं को ध्यान में रखेंगे। सबसे पहले पिकनिक का उद्देश्य क्या है? पिकनिक का स्थान कौन सा होगा? जहाँ आप को बाग–बगीचा, पानी, खेलने की जगह व मनोरम दृश्य दिखाई दें। क्या सारे बच्चे और शिक्षक पिकनिक जाएँगे? स्कूल बस से जाएँगे। सुबह निश्चित समय पर रवाना होंगे तथा शाम को वापस कब आएँगे? खाने में क्या क्या ले जाएँगे? खेलने के लिये कौनसे साधन ले जाने होंगे? कितना पैसा चाहिएगा इत्यादि। इन सभी सवालों के आधार पर योजना बना लेने पर ही आप सफलतापूर्वक पिकनिक मना पाएँगे।

विशेषताएँ :

1. योजना एक लगातार और स्वतः होने वाली प्रक्रिया है।
2. योजना उपलब्ध साधनों के उपयोग की दृष्टि से वास्तविक हो।
3. योजना इस प्रकार बनाई जानी चाहिये ताकि वह व्यक्ति या पारिवारिक समूह की आवश्यकता को पूरा कर सके।
4. योजना बनाते समय परिवार के सभी सदस्यों का सक्रिय योगदान हो।
5. योजना लचीली हो ताकि आवश्यक परिवर्तन किये जा सके।

ii. संगठित करना (Organizing):

किसी भी कार्य की योजना बनाने के पश्चात् यह आवश्यक हो जाता है कि हम योजनानुसार क्रियाओं को क्रमबद्ध करें। इन क्रियाओं हेतु हमें विभिन्न साधनों की आवश्यकता होगी। इन्हें कहाँ से, कब व कैसे एकत्रित किया जाएगा ताकि कार्य समय पर सफलता पूर्वक सम्पन्न हो सके। अर्थात संगठित करना वह क्रिया है जिसमें योजनानुसार कार्य को सम्पन्न करने हेतु संसाधनो का उपलब्ध कराना, उन्हें समन्वित कर क्रमानुसार व्यस्थित करना तथा कार्य सम्पन्न करने हेतु सदस्यों द्वारा एकत्रित संसाधनो का समय पर उचित उपयोग करना सम्मिलित है।

आयोजन प्रक्रिया के अर्न्तगत स्कूल से पिकनिक जाने की योजना बनाई गई है। तत्पश्चात् योजनानुसार चीजों को संगठित करने की बात आती है। इन्हें हम निम्नानुसार समझ सकते हैं:

1. पिकनिक जाने वाले सदस्यों की सूची तैयार करना।
2. पिकनिक स्थल की पूर्ण जानकारी एकत्रित करना।
3. पिकनिक के दौरान सदस्यों को बस कहाँ–कहाँ से कितनी बजे एकत्रित करेगी ?
4. पिकनिक सामग्री कौन, कहाँ से, कब व किस प्रकार एकत्रित कर बस में रखवाएगा ?
5. आपातकालीन स्थिति में किन बातों पर विशेष ध्यान देना है तथा उसकी क्या व्यवस्था रहेगी ?

6. पिकनिक समाप्त होने पर सभी सदस्य किस प्रकार अपने निर्धारित समय पर उपने निवास पर पहुँचेगे? यदि रात्रि हो जाए तो क्या कोई जिम्मेदार व्यक्ति बच्चों की मदद के लिये नियुक्त किये हैं आदि–आदि ऐसी क्रियाए है जिन्हें संगठित कर पिकनिक को एक सफल आयोजन बनाया जा सकता है।

iii. क्रियान्वित करना (Implementing) :

जब योजना बन कर तैयार हो जाती है तो बात आती है योजना को लागू करने की। लागू करने से पहले योजना सिर्फ या तो मस्तिष्क में या कागजों में रहती है। परन्तु लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतू योजना को क्रियान्वित करना पड़ता है। इस चरण में व्यक्ति योजनानुसार क्रिया करता है अर्थात योजना को क्रियान्वित करना वह चरण है जिसमें व्यक्ति द्वारा योजना बनाई जा चुकी है, योजनानुसार सभी संसाधनो का एकत्रीकरण एवं संगठन हो चुका है एवं अब योजना क्रियान्वित करने हेतु तैयार है, योजना के सभी मुद्दो पर बारिकी से विश्लेषण हो चुका है तथा सम्बन्धित सदस्यों द्वारा योजना लागू करने के लिये तैयार है।

उदाहरणार्थः

1. पिकनिक जाने वालों की सूची बनाई जा रही है।
2. पिकनिक स्थल पर जाकर जानकारी एकत्रित की जा रही है।
3. पिकनिक की सामग्री खरीदी जा रही है।
4. नगरीय प्रशासन को आपातकालीन स्थिति मैं तैयार रहने हेतू पत्र लिखा जा रहा है।
5. पिकनिक की गतिविधियाँ, समय तालिका आदि का नोटिस तैयार कर अभिभावकों को पहुँचाया जा रहा है, आदि अनेक क्रियाओं को योजनानुसार क्रियान्वित कर इस आयोजन को सफल बनाया जा सके।

iv. नियन्त्रण (Controlling) :

व्यवस्थापन प्रक्रिया में नियंत्रण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कार्यों को योजनानुसार निष्पादित किया जाता है। इस चरण के दौरान यह देखा जाता है कि योजना के अनुसार क्रियाएँ चलें ताकि जैसा सोचा गया था उसी प्रकार काम हो। जैसे योजना बनाते समय पिकनिक के लिये चुने स्थान पर सभी पहुँचे।

फॉक्स के अनुसार : ''नियंत्रण कार्यों की योजना के अनुसार पुष्टि करने से सम्बन्धित है। व्यवस्था में यह सर्वाधिक चुनौतिपूर्ण कार्य है जिसमें कि व्यवस्था की कला और विज्ञान सम्मिलित है। व्यवस्था की कला विशेष रुप से व्यक्तिगत नेतृत्व के क्षेत्र में सम्मिलित है, जिसमें प्रभावशाली सूझबूझ की आवश्यकता होती है और व्यक्तियों को प्रोत्साहित किया जाता है।''

किसी भी योजना की सफलता उसके नियंत्रण पर आधारित होती है। सही नियंत्रण की अनुपस्थिति में अच्छी से अच्छी योजना विफल हो जाती है। यदि नियंत्रण करते समय ऐसा लगे कि योजना के मुताबिक स्थिति में बदलाव आवश्यक है तो उसी समय सही निर्णय ले कर या कुछ फेरबदल कर के योजना को क्रियान्वित करना चाहिये। अतः आवश्यकता पड़ने पर योजना का समायोजन करना पड़ता है क्योंकि कभी कभी परिस्थिति बदल सकती है या योजना दोष पूर्ण हो सकती है। ऐसी स्थिति में योजना में सुधार ला कर निर्णयों को बदलना पड़ता है। उदाहरणार्थ आपने केक बनाने की योजना बनाई लेकिन अचानक विद्युत आपूर्ति गड़बड़ा गई, ऐसी स्थिति में आपको विवेकपूर्ण निर्णय लेना पड़ता है जैसे गैस तन्दूर का उपयोग कर केक बनायें या फिर किसी अन्य मिठाई द्वारा केक को प्रतिस्थापित करें।

v. मूल्यांकन(Evaluating) :

प्रबन्ध प्रक्रिया की तीसरी एवं अन्तिम प्रक्रिया 'मूल्यांकन' है। इस चरण में पूर्व में बनाई गई योजना

एवं योजना के नियंत्रण पर गौर किया जाता है और यह निर्धारित किया जाता है कि कौन सा कार्य किस प्रकार सम्पन्न हुआ। कार्य अच्छा हुआ या बुरा। इस कार्य को और अधिक अच्छा कैसे बनाया जा सकता है ताकि भविष्य में उत्तम व्यवस्था की जा सके। मूल्यांकन प्रबन्ध प्रक्रिया एवं प्राप्त परिणामों की सफलता को निर्धारित करने में सहायक होता है। मूल्यांकन प्रबन्ध का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण यंत्र है। मूल्यांकन समय–समय पर करते रहना चाहिये जिससे हमें पूर्ण प्रक्रिया की कमियाँ एवं अच्छाईयाँ समझने में मदद मिल सके ताकि भविष्य में योजना बनाते समय इनमें सुधार लाया जा सके। जैसे आपने बच्चे को प्रतिदिन दो घण्टे पढ़ाने की योजना बनाई ताकि वह प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हो सके। इस योजना के क्रियान्वयन के पश्चात् मूल्यांकन के दौरान आपने पाया कि बच्चा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हुआ यानि कि आपकी योजना एक अच्छी योजना थी। इस तरह की योजना आगे भी अपनाई जा सकती है। लेकिन यदि बच्चा आपके निर्धारित लक्ष्य के अनुसार प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण न हो तो आपको बनाई गई योजना में सुधार करने होंगे जैसे पढ़ने का समय बढ़ाना, पाठ्य सामग्री में सुधार इत्यादि।

गृह प्रबन्ध में आयोजन, नियंत्रण और मूल्यांकन तीनों ही चरणों की अपनी महत्ता है। ये तीनों आपस में एक दूसरे से इस प्रकार जुड़े हैं कि तीनों को करने के बाद ही हम किसी कार्य को सम्पूर्ण कर सकते है।

3. निर्णय प्रक्रिया (Decision making) :

निर्णय प्रक्रिया प्रबन्ध की सबसे महत्त्वपूर्ण एवं सूक्ष्म इकाई है। व्यवस्थापन प्रक्रिया के सभी चरण निर्णय प्रक्रिया की अनुपस्थिति में बेकार हैं। जब हमारे सामने कोई समस्या खड़ी होती है तो हम उस समस्या को हल करने के लिए विकल्पों को ढूंढते हैं। सम्भावित विकल्पों में से किसी एक का चयन कर, जो हमारे लिये सर्वाधिक उपयोगी हो, के द्वारा अपनी समस्या का समाधान कर लेते हैं। इसी प्रक्रिया को निर्णय प्रक्रिया कहा जाता है।

व्यवस्थापन प्रक्रिया में निर्णय केन्द्र बिन्दु होता है क्योंकि गृह व्यवस्था के सभी सौपानों में जब कोई समस्या आती है, तब बहुत से विकल्पों को सामने रखते हुए निर्णय करना आवश्यक हो जाता है। जैसे व्यक्ति को प्यास लगी है तो वह उसे पानी, शरबत, फलों के रस या ठण्डे पेय पदार्थ द्वारा बुझा सकता है। इनमें से किसी एक का चयन व्यक्ति अपनी परिस्थितियों को देखते हुए करता है एवं दी हुई परिस्थितियों में श्रेष्ठतम मार्ग का चयन ही निर्णय है।

निर्णय प्रक्रिया के चरण :

i. समस्या की पहचान एवं व्याख्या :

सबसे पहले समस्या को पहचानिये एवं उसे पूरी तरह समझिये। अब हमें समस्यात्मक स्थिति के बारे में सोचना चाहिये। कई बार हम समस्या को बाहरी रुप से देखकर ही आगे बढ़ जाते हैं और ऐसी स्थिति में कई बार गलत निर्णय ले लेते हैं। अतः समस्या का हर तरफ से सही आकलन (Assessment) आवश्यक है। उदाहरणार्थ यदि कार्य करने हेतु समय एक समस्या है तो यह पता लगाना आवश्यक है कि समस्या समय के गलत व्यवस्थापन की है या आवश्यक कार्य अधिक हैं।

ii. वैकल्पिक हलों की खोज करना :

व्यवस्था करने वाले व्यक्तियों को विकल्प ढूंढने तथा प्रत्येक विकल्प के परिणामों को जानने हेतु अत्यधिक ज्ञान की आवश्यकता होती है। किसी एक समस्या के निवारण के विभिन्न सम्भावित हल हो सकते है इनमें से कौन से हल द्वारा वांछित लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है इसकी जानकारी होना अत्यन्त आवश्यक है। जैसे यदि आप अपना पैसा सुरक्षित रखना चाहते हो तो इसके कई तरीके हैं। आप चाहें तो इसे बैंक में रख सकते हो, किसान विकास पत्र खरीद सकते हो, सोना खरीद कर रख सकते हो, किसी

को ब्याज पर दे सकते हो इत्यादि। जहाँ बहुत ज्यादा विकल्प होते हैं वहाँ भ्रम की बहुत अधिक सम्भावना होती है।

iii. विकल्पों के संदर्भ में सोचना :

सभी विकल्पों की खोज करने के पश्चात् उपलब्ध ज्ञान और सूचनाओं के आधार पर निर्णयकर्त्ता उनका मूल्यांकन करता है। अर्थात् विभिन्न विकल्पों की खोज के पश्चात् उनके गुण–दोष, अच्छाई–बुराई आदि पर विचार करना आवश्यक है। विकल्पों का मूल्यांकन करते समय उनके मूल्य, समय, धन, शक्ति आदि से सम्बन्धित बिन्दुओं को भली प्रकार से समझ लेना आवश्यक है।

iv. एक विकल्प का चयन करना :

विभिन्न विकल्पों में से उत्तम विकल्प का विवेकपूर्ण चयन करते समय यदि व्यवस्थापक अपने मूल्य एवं स्तर निश्चित कर ले तो उसके लिए इच्छित परिणाम प्राप्त करना आसान हो जाता है। यदि तीसरे चरण में विकल्पों का गहराईसे मूल्यांकन किया जाता है तो सबसे उत्तम हल अपने आप दृष्टिगत होने लगता है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. प्रबन्ध एक कला है जो निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति के लिये साधनों, सामग्री, कार्य, कार्य प्रणाली के मध्य सार्थक संयोजन स्थापित करता है। व्यवस्था सर्वव्यापी है, इसका उपयोग प्रत्येक घर में किया जाता है।
2. मनुष्य के प्रत्येक कार्य के पीछे उसकी सोच एवं भावनात्मक पृष्ठभूमि कार्य करती है और इसी से वह प्रभावित होता है। परिवार व्यवस्था को कायम रखने में परिवार के मूल्य, लक्ष्य तथा स्तर सहयोग देते हैं।
3. मूल्य प्रेरणात्मक तत्त्व हैं जो मनुष्य की भावनाओं को विशेष दिशा देते हैं। पारिवारिक योजना एवं प्रबन्ध प्रक्रियाओं का संचालन मूल्यों के आधार पर होना चाहिये। पारिवारिक सदस्यों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिये लक्ष्यों का निर्धारण किया जाता है। लक्ष्य मूल्य पर आधारित होते हैं। ये लक्ष्य अल्पकालीन, मध्य अन्त एवं दीर्घकालीन प्रकार के होते हैं।
4. निर्धारित लक्ष्यों के स्तर को प्राप्त करके परिवार अपने जीवन को सुखमय और सफल बनाते हैं। स्तर परम्परागत एवं परिवर्तनशील हो सकते हैं।
5. एक कुशल प्रबन्ध में आयोजन, संगठन, क्रियान्वयन, नियंत्रण एवं मूल्यांकन पाँचों प्रक्रियाओं की प्रमाणिकता की पहचान होती है। प्रबन्ध प्रक्रिया में पाँचों अर्न्तसम्बन्धित एवं अर्न्तनिर्भर होते हैं। प्रबन्ध प्रक्रिया द्वारा हम जीवन में गुणात्मक वृद्धि कर सकते हैं।
6. गृह व्यवस्था में निर्णय लेने की प्रक्रिया एक महत्त्वपूर्ण यंत्र है। निर्णय, किसी कार्य को करने के अनेक संभव विकल्पों में से श्रेष्ठतम के चयन की मानसिक प्रक्रिया है।
7. सही समय पर सही निर्णय लेना ही प्रबन्ध का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है। प्रबन्ध के हर चरण में निर्णय की आवश्यकता होती है। प्रभावशाली व्यवस्थापन के लिये प्रत्येक व्यक्ति को कुछ ठोस व महत्त्वपूर्ण निर्णय जो उपयुक्त हों लेना आना अत्यन्त आवश्यक है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :
   (i) ये वे प्रेरणात्मक तत्व हैं जो मनुष्य की भावनाओं को विशेष दिशा प्रदान करते हैं :–
   (अ) लक्ष्य (ब) स्तर (स) मूल्य (द) प्रबन्ध

(ii) गृह व्यवस्था श्रृंखला है :—

(अ) तत्वों की (ब) साधनों की (स) निर्णयों की (द) लक्ष्यों की

(iii) आर्थिक लाभ प्राप्त करना किस प्रकार का मूल्य है :—

(अ) आन्तरिक (ब) बाह्य (स) व्यक्तिगत (द) सामाजिक

(iv) ये वे लक्ष्य होते हैं जो हमारी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं :—

(अ) अल्पकालीन (ब) मध्य अन्त (स) दीर्घकालीन (द) लघु

(v) प्रबन्ध एक प्रक्रिया है जो निरन्तर चलती रहती है :—

(अ) शारीरिक (ब) मानसिक (स) आर्थिक (द) सामाजिक

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) मूल्यों की तुलना में लक्ष्य अधिक .... होते हैं।

(ii) .... मूल्य के मापक हैं।

(iii) कई विशिष्ट स्तरों का संयोग .... का स्तर कहलाता है।

(iv) वे स्तर जिनमें बदलाव लाना कठिन है, ... स्तर कहलाते हैं।

(v) प्रबन्ध प्रक्रिया में .... ही सफलता का आधार है।

vi) किसी भी परिस्थिति में .... मार्ग का चयन ही निर्णय है।

3. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये :

i) आन्तरिक मूल्य ii) मध्य अन्त लक्ष्य iii) परिवर्तनशील स्तर
iv) मूल्यांकन v) वैकल्पिक की खोज।

4. प्रबन्ध की परिभाषा दीजिए। उचित उदाहरण द्वारा प्रबन्ध के विभिन्न चरणों की व्याख्या कीजिये।

5. गृह कार्य को सुचारू रूप से चलाने हेतु प्रबन्ध की आवश्यकता पर प्रकाश डालिये।

6. गृह व्यवस्था में प्रबन्ध के सभी चरणों का महत्त्व बराबर है। कथन की पुष्टि कीजिये।

7. मूल्यों की विशेषताओं के बारे में विस्तार पूर्वक लिखिये।

8. लक्ष्यों एवं स्तरों के मध्य क्या सम्बन्ध है? इनके वर्गीकरण को समझाइये।

9. ''निर्णय प्रक्रिया'' प्रबन्ध का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में कई निर्णय लेता है। व्याख्या कीजिये।

10. निर्णय प्रक्रिया के विभिन्न चरणों की महत्ता बताते हुए उनके आपसी सम्बन्ध के बारे में लिखिये।

उत्तरमाला :

1. (i) स, (ii) स, (iii) ब, (iv) अ, (v) ब
2. (i) निश्चित् (ii) स्तर, (iii) रहन—सहन (iv) परम्परागत
   (v) योजना (vi) श्रेष्ठतम्